

ईश्वरलाल ठाकोरलाल अलमौला

बनाम

मोतीभाई नागजीभाई

10 अगस्त, 1965

(के.एन. वांचू, जे.सी. शाह व जे.आर.मुघोलकर, जे.जे.)

बम्बई किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम, 1948 में 67- परन्तुक को धारा-43 सी-बम्बई अधिनियम, 1956 का 13 द्वारा लाया गया नया प्रावधान- बम्बई अधिनियम, 1952 का अधिनियम 33 अधिनियम के बाद दायर मुकदमों में किरायेदार की सुरक्षा करता है- धारा-70 एवं 85- सिविल न्यायालयों का क्षेत्राधिकार- प्रावधान का दायरा- क्या ये कोई मूल प्रावधान है।

जून 1939 में, अपीलकर्ता ने कृषि प्रयोजनों के लिए पहले प्रतिवादी के पिता को और बाद में प्रतिवादी को कुछ भूमि की किरायेदारी प्रदान की। नए समझौतों के तहत किरायेदारी साल-दर-साल जारी रखी जाती थी। नवंबर 1955 में प्रतिवादी को 31 मार्च 1956 में जमीनों का खाली कब्जा देने के लिए नोटिस देने के बाद, अपीलकर्ता ने बेदखली के लिए मुकदमा दायर किया। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता का दावा डिक्री किया, लेकिन अपील में जिला न्यायाधीश ने इस निर्णय को इस आधार पर उलट दिया कि बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम 67, 1948 की धारा

43 सी सपठित बॉम्बे किरायेदारी अधिनियम, 1939 के प्रावधान के तहत, प्रतिवादी उस अधिनियम के अर्थ के तहत एक संरक्षित किरायेदार था, और यह कि सिविल कोर्ट के पास विवादग्रस्त भूमि पर कब्जा करने की डिक्री देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। उच्च न्यायालय में अपील खारिज कर दी गई।

इस न्यायालय में अपील में,

अभिनिर्धारित किया गया (शाह और वांचू, जे.जे. के द्वारा)

(1) धारा 43 सी का प्रावधान किरायेदार को सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास करता है यदि किरायेदार को मूल रूप से अधिनियमित 1948 के अधिनियम का संरक्षण प्राप्त था, भले ही बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि (संशोधन) अधिनियम, 1952 द्वारा सुरक्षा छीन ली गई हो। धारा 43 सी का प्रावधान किरायेदार को उन मामलों में भी दिया जाना चाहिए, जहां 1956 के संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले दायर मुकदमे में इसका दावा किया गया है, अगर मुकदमा अंतिम रूप से निपटाया नहीं गया है।

पटेल मगनभाई जेठाभाई बनाम सोमाभाई सुरसांग, (1958) 60 बोम एल.आर. 1383, स्वीकृत।

परंतुक का उचित कार्य मूल खंड में अधिनियमित किसी चीज को छोड़ना या योग्य बनाना है, जो कि प्रावधान के अलावा उस खंड के भीतर होगा। लेकिन प्रश्न परंतुक की व्याख्या का है। ऐसा कोई नियम नहीं है कि

परंतुक को हमेशा मुख्य अधिनियम के दायरे तक ही सीमित रखा जाना चाहिए और यह कभी-कभी एक मूल प्रावधान के बराबर हो सकता है।

(2) जिला न्यायाधीश द्वारा मुकदमा खारिज करने का पारित आदेश बरकरार नहीं रखा जा सका।

1956 के अधिनियम 13 द्वारा 1948 के अधिनियम 67 में शामिल धारा 85 ए के तहत, यहां तक कि सिविल कोर्ट में उचित रूप से शुरू किए गए मुकदमे में भी, यदि कोई मुद्दा उठता है जिसे राजस्व न्यायालय द्वारा तय किया जाना आवश्यक है, तो ऐसे मुद्दे को सुनवाई के लिए भेजा जाएगा। वह अदालत, और मुकदमे का निपटारा उस निर्णय के आलोक में किया जाएगा। जिला न्यायाधीश को मुकदमे में उठे किरायेदारी और उसके निर्धारण से संबंधित प्रश्नों को मामलातदार द्वारा राजस्व अदालत के रूप में विचार करने के लिए संदर्भित करना चाहिए था और मुकदमे के निपटान के लिए आगे नहीं बढ़ना चाहिए था।

पांडुरंग हरि बनाम शंकर मारुति, 62 बोम एल.आर. 873 एवं कालीचरण भजनलाल भय्या बनाम राय महालक्ष्मी एवं अन्य, 4 गुज. एल.आर. 145, माना गया।

(मुधोलकर, जे. द्वारा असहमति) धारा 43 सी के प्रावधान का लाभ केवल उस व्यक्ति को उपलब्ध होगा जो अधिनियम के तहत किरायेदार या संरक्षित किरायेदार होने का दावा करता है। धारा 70 के तहत, यह सवाल

कि कोई व्यक्ति संरक्षित किरायेदार है या नहीं, राजस्व अदालत के रूप में कार्य करने वाले मामलातदार द्वारा निर्धारित किया जाना है और धारा 85(1) के आधार पर किसी भी नागरिक अदालत को इस तरह के दावे पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है। जैसे ही इस तरह का कोई दावा सिविल कोर्ट के समक्ष किया जाता है, उसे अपना कार्य रोकना चाहिए और प्रश्न को मामलातदार के पास भेजना चाहिए, जिसके पास विशेष क्षेत्राधिकार है वह पक्षों के बीच मुद्दे के तथ्यों पर निर्णय करेगा और साथ ही विभिन्न मुद्दे पर असर डालने वाले कानून के प्रावधान के प्रभाव का निर्धारण भी करेगा।

यह अदालत विभिन्न अधिनियमों की जांच करने, प्रावधानों की व्याख्या करने और वर्तमान मामले में उनकी प्रयोज्यता के बारे में अपने निष्कर्ष बताने के लिए स्वतंत्र नहीं है। इस प्रकार की अपील में इनमें से कोई भी कार्य करने का अधिकार क्षेत्र धारा-70(बी) और 85(1) के संयुक्त संचालन द्वारा वर्जित है।

पाइका दासरू भंगले बनाम राजेश्वर बालाजी अवारी, (1958) बोम एल.आर. 8 (एफ.बी.), संदर्भित।

सिविल अपील का क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 63/2010

बाम्बे उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील सं.-439/1959 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 30 अप्रैल 1959 के विरुद्ध प्रस्तुत विशेष अनुमति के तहत दर्ज अपील।

अपीलकर्ताओं के लिए एसटी देसाई, एसएन एंडली, मोहिंदर नारायण, रामेश्वर नाथ और पीएल वोहरा।

प्रतिवादी की ओर से एसएस शुक्ला।

वांचू और शाह का निर्णय, जे.जे. शाह द्वारा दिया गया था, जे. मुधोलकर, जे. ने असहमतिपूर्ण राय दी।

शाह, जे. 18 जून, 1939 को, ईश्वरलाल अलमौला - जिसे इसके बाद "अपीलकर्ता" कहा जाता है - ने प्रतिवादी के पिता नागजीभाई को ब्रोच शहर के कनबीवागा में सर्वेक्षण संख्या 52 और 158 वाली भूमि में कृषि उद्देश्यों के लिए किरायेदारी अधिकार प्रदान किए। और उस तिथि के बाद से भूमि नागजीभाई के कब्जे में रही और उनके बेटे मोतीभाई की मृत्यु के बाद 2 नवंबर, 1955 को पत्र द्वारा अपीलकर्ता ने किरायेदारी समाप्त कर दी और प्रतिवादी से 31 मार्च को भूमि का खाली कब्जा देने के लिए कहा। 1956, और 4 अप्रैल, 1956 को प्रतिवादी के खिलाफ बेदखली की डिक्री और अन्तवर्ती लाभ के लिए ब्रोच में सिविल जज, सीनियर डिवीजन की अदालत में 1956 का मुकदमा संख्या 180 दायर किया गया। सिविल जज ने अपीलकर्ता को डिक्री किया। अपील में जिला न्यायाधीश ब्रोच ने ट्रायल

कोर्ट के फैसले को पलट दिया और मुकदमा खारिज कर दिया। उन्होंने यह माना की बॉम्बे एक्ट 1956 का 13 के द्वारा बॉम्बे किरायेदारी एवं कृषि भूमि अधिनियम 1948 का 67 में धारा-43 सी के परन्तुक को लाया गया। जिसके पूर्व से प्रत्यर्थी 1956 के अधिनियम 13 के द्वारा किरायेदार बना रहा और सिविल कोर्ट के पास डिक्री देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। विवादग्रस्त भूमि पर कब्जा. उस निष्कर्ष पर पहुंचने में विद्वान न्यायाधीश ने पटेल मगनभाई जेठाभाई बनाम सोनजाभाई सुरसांग में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले का पालन किया । बॉम्बे उच्च न्यायालय में दूसरी अपील को सरसरी तौर पर खारिज कर दिया गया था। अपीलकर्ता ने विशेष अनुमति के साथ इस न्यायालय में अपील की है।

अपीलकर्ता के वकील ने अपील के समर्थन में दो तर्क उठाए:

(1) कि 1948 के बॉम्बे अधिनियम 67 के आधार पर प्रदत्त या मान्यता प्राप्त भूमि में प्रतिवादी के अधिकार 1952 के बॉम्बे अधिनियम 33 के अधिनियमन पर और 1956 के अधिनियम 13 द्वारा किए गए संशोधनों द्वारा समाप्त हो गए थे (जो इसमें लाया गया था) मुकदमे के लंबित रहने के दौरान बलपूर्वक) उन अधिकारों को प्रतिवादी को बहाल नहीं किया गया ताकि अपीलकर्ता के उसे बेदखल करने के दावे पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े और

(2) कि अपीलकर्ता द्वारा दायर मुकदमे में सिविल न्यायालय प्रतिवादी द्वारा धारित भूमि पर कब्जे की डिक्री देने में सक्षम था।

इस अपील में उठाए गए प्रश्न और प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों पर असर डालने वाले तथ्य संक्षेप में बताए जा सकते हैं। विवादग्रस्त भूमि ब्रोच बरो नगर पालिका की सीमा के भीतर स्थित है। प्रतिवादी के पिता नागजीभाई और उनकी मृत्यु के बाद प्रतिवादी जून 1939 से भूमि के किरायेदार थे, नए समझौतों के तहत किरायेदारी साल दर साल जारी रही। 31 मार्च 1956 को प्रतिवादी को जमीन खाली करने और कब्जा देने का आह्वान करने वाला नोटिस बॉम्बे लैंड रेवेन्यू कोड, 1879 की धारा 84. के संदर्भ में दिया गया था। 1939 के बॉम्बे टेनेंसी एक्ट 29 को 11 अप्रैल, 1946 को उस क्षेत्र में लागू किया गया था जिसमें भूमि स्थित है, और नागजीभाई का नाम संरक्षित किरायेदार के रूप में अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किया गया था।

बॉम्बे किरायेदारी एवं कृषि भूमि अधिनियम 1948 का 67 के द्वारा, जो कि दिनांक 28.12.1948 से पूर्व में आया था, बॉम्बे कास्तकारी अधिनियम 1939 का 29 निरस्त हो गया और यह निरसन उक्त निरसन करने वाले अधिनियम की धारा 3, 3 ए व 4 के अधीन रहते हुए प्रभाव में रहा, बॉम्बे कास्तकारी अधिनियम 1939 का 29 के प्रभाव से पूर्व की स्थिति बनी रही जबकि अधिनियम निरस्त हो चुका था और प्रत्यर्थी की स्थिति 1948 के अधिनियम 67 की धारा-31 से संरक्षित रहा।

1948 के अधिनियम 67 में एक किरायेदार को परिभाषित किया गया था जिसका अर्थ है एक कृषक जो पट्टे पर भूमि रखता है और इसमें वह व्यक्ति भी शामिल है जिसे अधिनियम के प्रावधानों के तहत किरायेदार माना जाता है। , "भूमि" को धारा 2(18) द्वारा परिभाषित किया गया था। जिसके अनुसार "भूमि जिसका उपयोग कृषि उद्देश्यों के लिए किया जाता है, और इसमें कृषि भवनों की साइटें और कृषकों द्वारा कब्जा किए गए आवास गृहों की साइटें शामिल हैं। अधिनियम की धारा 5 में प्रावधान है कि किसी भी भूमि की कोई भी किरायेदारी दस वर्ष से कम की अवधि के लिए नहीं होगी, और धारा 14 में उल्लिखित आधारों को छोड़कर कोई भी किरायेदारी दस वर्ष की अवधि की समाप्ति से पहले समाप्त नहीं की जाएगी। धारा 14 में प्रावधान है कि:-

"न्यायालय के किसी भी समझौते, उपयोग, डिक्री या आदेश के बावजूद, किरायेदार द्वारा रखी गई किसी बात की किरायेदारी तबतक समाप्त नहीं की जायेगी जबतक की किरायेदारी का प्रावधान ए से ई में निर्दिष्ट किये कार्य किये जाते हैं या चूक की जाती है।"

यह बताना पर्याप्त हो सकता है कि धारा-14 के तहत वार्षिक किरायेदारी की अनुबंध अवधि की समाप्ति पर पट्टेदार को पट्टे पर दी गई भूमि को खाली करने और कब्जा देने के लिए कहने वाला नोटिस



किरायेदारी निर्धारित करने के लिए काम नहीं करता है। धारा-29 की उपधारा (2) से मैं यह अधिनियमित किया गया कि कोई मकान मालिक मामलतदार के आदेश के बिना किसी किरायेदार द्वारा रखी गई भूमि पर कब्जा प्राप्त नहीं करेगा। अध्याय 3 संरक्षित किरायेदारों के विशेष अधिकारों और विशेषाधिकारों से संबंधित है। धारा-32 द्वारा यह प्रावधान किया गया था कि किसी भी कानून, उपयोग या अनुबंध में कुछ भी विपरीत होने के बावजूद, एक संरक्षित किरायेदार किसी भी समय मकान मालिक से संरक्षित किरायेदार के रूप में उसके द्वारा रखी गई भूमि खरीदने का हकदार होगा। धारा 34 ने संरक्षित किरायेदारी निर्धारित करने के मकान मालिक के अधिकार पर कुछ अन्य प्रतिबंध निर्धारित किए। प्रथम उपधारा ने मकान मालिक को धारा 14 में किसी भी बात के बावजूद संरक्षित किरायेदारी निर्धारित करने की स्वतंत्रता दी। यदि जमींदार को वास्तविक रूप से भूमि की आवश्यकता है, तो एक वर्ष का लिखित नोटिस देकर, (1) व्यक्तिगत रूप से खेती करने के लिए, या (2) अपने स्वयं के प्रयोजन के किसी गैर-कृषि उपयोग के लिए। अधिनियम ने अधिनियम द्वारा निपटाए जाने, निर्णय लेने या निपटने के लिए आवश्यक प्रश्नों के निर्धारण के लिए एक विशेष मंच भी प्रदान किया। या (2) अपने स्वयं के प्रयोजन के किसी गैर-कृषि उपयोग के लिए। अधिनियम ने अधिनियम द्वारा निपटाए जाने, निर्णय लेने या निपटने के लिए आवश्यक प्रश्नों के निर्धारण के लिए एक विशेष मंच भी प्रदान किया।

धारा-70 द्वारा मामलातदार के कर्तव्य निर्दिष्ट किये गये। इस धारा में निम्न प्रावधानित है,

"इस प्रकार अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, मामलातदार द्वारा किए जाने वाले कर्तव्य और कार्य निम्नलिखित होंगे-

(ए)

(बी) यह तय करने के लिए कि कोई व्यक्ति किरायेदार है या संरक्षित किरायेदार है"

धारा 85 की पहली उपधारा में प्रावधान है कि:-

किसी भी सिविल न्यायालय के पास किसी भी प्रश्न को निपटाने, निर्णय लेने या निपटाने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा, जिसे इस अधिनियम के तहत मामलातदार या न्यायाधिकरण, एक प्रबंधक, कलेक्टर या अपील में बॉम्बे राजस्व न्यायाधिकरण या पुनरीक्षण में या प्रांतीय सरकार द्वारा स्वयं के नियंत्रण की शक्तियों के अधीन निपटाने या निर्णय लेने की आवश्यकता होती हो।

और इस धारा के प्रयोजन के लिए, एक सिविल न्यायालय में मामलातदार न्यायालय अधिनियम, 1906 के तहत गठित एक मामलातदार न्यायालय शामिल है। इसलिए, 1948 के अधिनियम 67 द्वारा, बॉम्बे किरायेदारी अधिनियम, 1939 के तहत प्राप्त संरक्षित किरायेदारों के

अधिकार, इसके बावजूद, थे उस अधिनियम को निरस्त करते हुए, संरक्षित किया गया, एक किरायेदारी समझौता कम से कम दस साल की अवधि के लिए होना था, और किरायेदारी को धारा 14 में निर्धारित कारणों के अलावा अवधि की समाप्ति से पहले निर्धारित नहीं किया जा सकता था। और किसी किरायेदार को दी गई भूमि का कब्जा धारा 29 (2) के तहत राजस्व न्यायालय के आदेश के अलावा अन्यथा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। एक मकान मालिक धारा-34 में उल्लिखित आधार पर संरक्षित किरायेदारी का निर्धारण कर सकता है । लेकिन एक संरक्षित किरायेदार को उसके द्वारा कब्जा की गई भूमि को खरीदने का अधिकार था।

राजस्व न्यायालय द्वारा अधिनियम के तहत निर्णय लेने, निपटाने या आदेश पारित करने के क्षेत्राधिकार के द्वारा सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार समाप्त कर दिया गया और राजस्व न्यायालय का यह क्षेत्राधिकार निहित हो गया की वे अधिनियम के प्रयोजन के लिए कास्तकारी या कास्तकार या संरक्षित कास्तकार से सम्बंधित प्रश्नों का निस्तारण करे।

जब 1948 का बॉम्बे एक्ट 67 ब्रोच शहर में लागू किया गया, तो प्रतिवादी ने उन अधिकारों को हासिल कर लिया, जो एक किरायेदार उस अधिनियम के तहत दावा कर सकता था और संरक्षित किरायेदार की स्थिति से आने वाले उसके अधिकार स्पष्ट रूप से संरक्षित रहे। लेकिन

उसके बाद विधायिका ने 12 जनवरी, 1953 से और धारा धारा-88 में संशोधन करके, 1952 का बॉम्बे अधिनियम 33 अधिनियमित किया। (जो एसएस के संचालन से कुछ क्षेत्रों और निर्दिष्ट विवरणों की भूमि को बाहर रखा गया। 1948 के बंबई अधिनियम 67 के 1 से 87) 1925 के अधिनियम 18 के तहत गठित सभी नगरपालिका बोरो के भीतर स्थित भूमि 1948 के अधिनियम 67 द्वारा शासित होना बंद हो गई। 1952 के बंबई अधिनियम 33 द्वारा संशोधन का लाभ उठाते हुए अपीलकर्ता ने कहा 31 मार्च 1956 से किरायेदारी को एस के अनुसार एक नोटिस द्वारा समाप्त करें। बॉम्बे लैंड रेवेन्यू कोड, 1879 के 84, और कब्जे की डिक्री के लिए सिविल कोर्ट में कार्रवाई शुरू की। कार्रवाई के लंबित रहने के दौरान, धारा 88 को 1956 के अधिनियम 13 द्वारा फिर से संशोधित किया गया था। विधानमंडल ने उस अधिनियम द्वारा धारा-88 के प्रावधान सी को निरस्त कर दिया। जिसको कि:-

1952 के अधिनियम 33 द्वारा संशोधित किया गया और अधिनियम के संचालन से छूट को सरकार और कुछ अन्य भूमि से संबंधित भूमि तक सीमित कर दिया गया। संशोधन का प्रभाव कुछ नगरपालिका नगरों के भीतर भूमि के किरायेदारों को बहाल करना था (ऐसी भूमि जो संशोधित धारा 88 और सम्मिलित धारा 88 ए से 88 सी में वर्णित भूमि के विवरण के अंतर्गत नहीं आती) बॉम्बे किरायेदारी और कृषि की सुरक्षा 1948 का भूमि अधिनियम 67 जैसा कि मूल रूप से अधिनियमित किया गया था।

यह सामान्य बात है कि इस अपील में हम जिस भूमि से संबंधित हैं, उसका धारा- 88 और 88ए से 88सी1956 के अधिनियम 13 द्वारा संशोधित अधिनियम में वर्णन नहीं है।

विधानमंडल ने भी 1956 के अधिनियम 13 द्वारा अधिनियमित किया। 43 सी जो प्रावधान द्वारा उन अधिकारों को पूर्वव्यापी प्रभाव से बहाल करने की मांग करता है जो पहले 28 दिसंबर, 1948 को या उसके बाद बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम 67 के तहत हासिल किए गए थे, इस बात के बावजूद कि 1952 का बॉम्बे अधिनियम 33 लागू किया गया था। वह क्षेत्र जिसमें भूमि स्थित है। धारा 43 सी प्रदान की गई:

"धारा 32 से 32 आर (दोनों सम्मिलित) और 43 में से कुछ भी सीमा के भीतर के क्षेत्रों में भूमि पर लागू नहीं होगा-

(ए) ग्रेटर बॉम्बे,

(बी) बॉम्बे प्रांतीय नगर निगम अधिनियम, 1949 के तहत गठित एक नगर निगम,

(सी) बॉम्बे म्युनिसिपल बरो अधिनियम, 1925 के तहत गठित एक नगरपालिका नगर,

(डी) बॉम्बे जिला नगरपालिका अधिनियम, 1901 के तहत गठित एक नगरपालिका जिला,

(ई) एक छावनी, या

(च) बॉम्बे टाउन प्लानिंग अधिनियम, 1954 के तहत टाउन प्लानिंग अनुसूची में शामिल कोई भी क्षेत्र

बशर्ते यदि किसी व्यक्ति ने 28 दिसंबर, 1948 को या उसके बाद इस अधिनियम के तहत किरायेदार के रूप में कोई अधिकार हासिल किया है, तो उक्त अधिकार को बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि (संशोधन) अधिनियम, 1952 से या (धारा 43 डी में स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए को छोड़कर), संशोधन अधिनियम, 1955 द्वारा प्रभावित नहीं माना जाएगा। इस तथ्य के बावजूद कि उक्त अधिनियम में से कोई भी उस क्षेत्र पर लागू किया गया है जिसमें ऐसी भूमि स्थित है।

इस अपील में निर्णय मुख्य रूप से धारा 43-सी के परंतुक के अर्थ और प्रभाव पर निर्भर होना चाहिए। प्रावधान का अधिनियमन, यह देखा जा सकता है, यह दर्शाता है कि कैसे अनाड़ी प्रारूपण किसी कानून के अर्थ को अस्पष्ट कर देता है। धारा 43-सी के मूल भाग की योजना में प्रावधान पूरी तरह से अनुचित प्रतीत होता है, जो खंड (ए) से (एफ) में निर्दिष्ट क्षेत्रों में भूमि को धारा 32 से 32-आर और 43 के संचालन से बाहर करता है। और खंड (सी) ऐसे क्षेत्रों में से एक को “बॉम्बे म्यूनिसिपल बरो अधिनियम, 1925 के तहत गठित एक नगरपालिका नगर” के रूप में निर्दिष्ट करता है। 1956 के अधिनियम 13 द्वारा सम्मिलित धारा धारा 32 से 32-आर 1

अप्रैल 1957 को किरायेदारों द्वारा रखी गई या धारा 32-पी या धारा 64 के तहत बेची गयी भूमि की अधिनियम की धारा 32, 32-एफ या 32-ओ के तहत खरीद और संबंधित मामलों से संबंधित है और धारा 43 आरक्षित अधिकार के आधार पर खरीदी गई भूमि के हस्तांतरण पर प्रतिबंध लगाती है।

परंतुक का उचित कार्य मूल खंड में अधिनियमित किसी चीज को छोड़ना या योग्य बनाना है, जो कि प्रावधान के अलावा उस खंड के भीतर होगा। किसी परंतुक की व्याख्या करते समय आमतौर पर यह माना जा सकता है कि इसका उद्देश्य यह था कि धारा के अधिनियमित भाग में परंतुक की विषय-वस्तु शामिल होगी। लेकिन सवाल प्रावधान की व्याख्या का है और ऐसा कोई नियम नहीं है कि प्रावधान हमेशा मुख्य अधिनियम के दायरे तक ही सीमित होना चाहिए। कभी-कभी किसी कानून में कोई परंतुक पूर्ववर्ती धारा की विषय-वस्तु से असंबंधित होता है, या उस धारा से बाहर के मामले शामिल होते हैं, और तब इसकी व्याख्या एक मूल प्रावधान के रूप में की जा सकती है, जो उसमें निर्दिष्ट मामले से स्वतंत्र रूप से निपटता है, न कि इस तरह मुख्य या पूर्ववर्ती अनुभाग को अर्हता प्राप्त करना।

धारा 43-सी के मूल खंड द्वारा किरायेदार धारा 32 से 32-आर द्वारा प्रदत्त अधिकारों में वर्णित भूमि के संबंध में अधिग्रहण नहीं करते हैं। धारा

43-सी का वह हिस्सा इसलिए योग्यता या अपवाद की प्रकृति में है, और धारा 32 से 32-आर के प्रावधान के रूप में कार्य करता है। धारा 43-सी का प्रावधान किसी अपवाद को प्रस्तुत करने या मुख्य अधिनियम द्वारा निर्धारित बहिष्करण के लिए कोई योग्यता लागू करने के लिए नहीं है, बल्कि एक ऐसे मामले से संबंधित है जो इससे संबंधित नहीं है। संदर्भ में यह धारा 32 से 32-आर (जो 1956 के अधिनियम 13 द्वारा जोड़े गए थे) के तहत प्राप्त या उत्पन्न होने वाले अधिकारों की रक्षा करना चाहता है, लेकिन 28 दिसंबर, 1948 को या उसके बाद 1948 के मूल अधिनियम 67 के तहत धारा 43-सी के मूल भाग के संचालन से 1952 के अधिनियम 33 के संचालन से, या "1955 के संशोधन अधिनियम" के संचालन से वे अधिकार संरक्षित नहीं हैं। यह याद किया जा सकता है कि 1952 के अधिनियम 33 द्वारा, अधिनियम नगरपालिका नगरों के भीतर भूमि पर लागू होना बंद हो गया, लेकिन धारा 43-सी के प्रावधान द्वारा प्रकट किए गए इरादे यह घोषित करना था कि मूल अधिनियम के तहत किरायेदारों के रूप में व्यक्तियों द्वारा प्राप्त सभी अधिकार नगरपालिका नगरों के भीतर भूमि के संबंध में उन्हें उपलब्ध रहना जारी रखा जाएगा जैसे कि 1952 का अधिनियम 33 कभी अधिनियमित ही नहीं किया गया था। "1955 का संशोधन अधिनियम 1956 के अधिनियम 13 के अलावा और कुछ नहीं है (मूल अधिनियम में जोड़ी गई धारा 2 (10-ए) और 1956 के अधिनियम 13 की धारा 1 (1) में "स्थायी किरायेदार" की परिभाषा देखें)। विधानमंडल



ने "संशोधन अधिनियम 1955" का हवाला देते हुए 1956 के अधिनियम 13 द्वारा किए गए संशोधनों के बावजूद, 1948 के अधिनियम 67 के तहत प्राप्त अधिकारों की रक्षा करने की भी मांग की है, जैसा कि धारा 43-डी में स्पष्ट रूप से प्रदान किया गया है। धारा 48 द्वारा 1956 का अधिनियम 13, उसके कुछ प्रावधानों के अधिनियम के संचालन से छूट की योजना को भूमि के विभिन्न वर्गों के संबंध में बड़े पैमाने पर संशोधित किया गया था। मूल रूप से अधिनियमित 1948 के अधिनियम 67 की धारा 88 को 88, 88-ए 88-बी, 88-सी और 88-डी द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। लेकिन छूट की यह संशोधित योजना और अधिनियम के अन्य प्रावधान धारा 43-सी के प्रावधानों के आधार पर 28 दिसंबर, 1948 को या उसके बाद प्राप्त किरायेदारों के अधिकारों को प्रभावित नहीं करेंगे। 1948 के अधिनियम 67 के तहत, धारा 43-डी द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए को छोड़कर।

हालाँकि, अपीलकर्ता के वकील ने आग्रह किया कि भले ही धारा 43-सी के प्रावधान को उसमें निर्दिष्ट मामलों से निपटने के रूप में पढ़ा जाए, यह प्रतिवादी की सहायता के लिए नहीं आता है, क्योंकि जिस तारीख को 1956 का अधिनियम 13 अधिनियमित किया गया था, प्रतिवादी की किरायेदारी कानून के अनुसार निर्धारित की गई थी, क्योंकि यह तब भूमि पर लागू होती थी, और प्रतिवादी किरायेदार नहीं रह गया था। इसके विपरीत स्पष्ट अधिनियम के अभाव में, वकील ने कहा, अपीलकर्ता के उस व्यक्ति से, जो मुकदमे की तारीख पर किरायेदार नहीं था, प्रचलित कानून

के अनुसार भूमि पर कब्जा प्राप्त करने का अधिकार नहीं माना जा सकता है। 1956 के अधिनियम 13 के अधिनियमन द्वारा प्रतिबंधित किया जा सकता है। इस तर्क के समर्थन में, वकील ने 1948 के अधिनियम 67 की धारा 89 (2) (बी) पर दृढ़ता से भरोसा किया जो प्रदान करता है।

"लेकिन इस अधिनियम में कुछ भी नहीं या इसके परिणामस्वरूप कोई निरसन नहीं हुआ-

(ए) ' ' ' ' ' '

(बी) इस अधिनियम में स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए अनुसार बचाएगा, प्रभावित करेगा या प्रभावित करने वाला समझा जाएगा,

(प) इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले ही अर्जित, उपार्जित या उपगत कोई अधिकार, स्वामित्व, हित, दायित्व या दायित्व, या

(पप) ऐसे किसी भी अधिकार, स्वामित्व हित, दायित्व या देनदारी या इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले किए गए या भुगते गए किसी भी चीज के संबंध में कोई कानूनी कार्यवाही या उपाय, और ऐसी किसी भी कार्यवाही को जारी रखा जाएगा और निपटाया जाएगा, जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं हुआ था।"

हमारे विचार में धारा 89 की उपधारा (2) जिसमें, कुछ बदलावों के साथ, 1904 के बॉम्बे जनरल क्लॉज एक्ट 1 की धारा 7 में पाए गए प्रावधानों को शामिल किया गया है, जो कानूनों को निरस्त करने वाले प्रावधानों के संचालन से संबंधित है, इस पर विचार करने में कोई प्रासंगिकता नहीं है। 1956 के अधिनियम 13 द्वारा किए गए संशोधनों का प्रभाव धारा 89 की उप-धारा (2) अधिनियम के प्रारंभ से पहले अर्जित या अर्जित किए गए अधिकार, शीर्षक, ब्याज, दायित्व या दायित्व की रक्षा करती है (अधिनियम में स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए को छोड़कर)। यह अधिनियम" यानी 1948 का अधिनियम 67, और यह "इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले" ऐसे किसी भी अधिकार, शीर्षक, ब्याज दायित्व या दायित्व या किए गए या भुगतने गए किसी भी चीज के संबंध में कानूनी कार्यवाही या उपचार की भी रक्षा करता है। अपीलकर्ता 1948 के अधिनियम 67 के अधिनियमित होने से पहले अर्जित अधिकार को लागू करने की मांग नहीं करता है, और 1956 में एक नोटिस द्वारा किरायेदारी के निर्धारण के अनुसार भूमि के कब्जे के लिए डिक्री के लिए एक मुकदमा दायर किया गया है, न कि अधिकार के संबंध में कोई मुकदमा या धारा 89 (2) के अर्थ के अंतर्गत "इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले" अर्जित या उपार्जित शीर्षक। वकील का तर्क इस धारणा पर आधारित है कि इस अधिनियम के प्रारंभ की अभिव्यक्ति का अर्थ 1956 के अधिनियम 13 का

प्रारंभ है, लेकिन उस धारणा के लिए कानून की भाषा में की आवश्यकता नहीं है।

अपीलकर्ता के वकील का वैकल्पिक तर्क कि 1904 के बॉम्बे जनरल क्लॉज एक्ट 1 की धारा 7 के आधार पर, 1956 के अधिनियम 13 को पारित करने से पहले प्राप्त अधिकारों को लागू करने के लिए कानूनी कार्यवाही को भी बचाया गया था, इसमें कोई बल नहीं है। सामान्य खंड अधिनियम की धारा 7 के अनुसार किसी अधिनियम का निरसन अन्य बातों के साथ-साथ निरस्त किए गए किसी भी अधिनियम के तहत अर्जित, उपार्जित या खर्च किए गए किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार या दायित्व को प्रभावित नहीं करेगा या ऐसे किसी भी अधिकार के संबंध में किसी जांच, कानूनी कार्यवाही या उपाय को प्रभावित नहीं करेगा। विशेषाधिकार, दायित्व, दायित्व आदि और ऐसी कोई भी जांच, कानूनी कार्यवाही या उपाय इस तरह शुरू या जारी रखा जा सकता है या लागू किया जा सकता है जैसे कि निरसन अधिनियम पारित नहीं किया गया था। 1956 का अधिनियम 13 जहां तक पुरानी धारा 88 के स्थान पर नई धारा 88 और 88-ए को 88-डी में प्रतिस्थापित करने का प्रयास करता है, इसे एक निरस्त अधिनियम माना जा सकता है। हालाँकि, बॉम्बे जनरल क्लॉजेज एक्ट की धारा 7, केवल तभी लागू होती है जब कोई अलग इरादा प्रकट नहीं होता है, और धारा 43-सी के प्रावधानों की शर्तों से एक अलग इरादा स्पष्ट रूप से प्रकट होता है जो बताता है कि किरायेदार के रूप में किसी

व्यक्ति द्वारा प्राप्त अधिकार 28 दिसंबर 1948 को या उसके बाद 1948 के अधिनियम 67 के तहत 1952 के अधिनियम 33 से प्रभावित नहीं माना जाएगा। इसलिए स्पष्ट अधिनियमन द्वारा प्रावधान 1952 के अधिनियम 33 के अधिनियमित होने से पहले 1948 के अधिनियम 67 के तहत प्राप्त अधिकारों को बचाता है।

1948 के अधिनियम 67 के अधिनियमित होने पर प्रतिवादी उस अधिनियम द्वारा प्रदत्त विविध अधिकारों के लिए किरायेदार के रूप में हकदार बन गया। यह दावा करने का अधिकार कि प्रत्येक संविदात्मक किरायेदारी वैधानिक रूप से दस साल की अवधि के लिए बढ़ा दी गई है, यह दावा करने का अधिकार कि किरायेदारी धारा 14 में उल्लिखित परिस्थितियों के अलावा अन्यथा निर्धारित नहीं की जा सकती है, और संरक्षित किरायेदारों के मामले में लगाए गए प्रतिबंधों के अधीन है। धारा 34, धारा 29 (2) के तहत एक आदेश के अलावा अन्यथा कब्जे से वंचित नहीं होने का अधिकार, 1952 के अधिनियम 33 के अधिनियमित होने से पहले प्रतिवादी में निहित कुछ अधिकार थे। ये और अन्य अधिकार किरायेदारों को उस तारीख से पूर्वव्यापी रूप से बहाल किए गए थे जिस दिन 1952 का अधिनियम 33 धारा 43-सी के प्रावधान में निहित स्पष्ट प्रावधान के आधार पर अधिनियमित किया गया था। विधानमंडल ने मूल रूप से 1948 के अधिनियम 67 के तहत दिए गए अधिकारों को पूर्वव्यापी प्रभाव से उस तारीख से बहाल कर दिया है जिस दिन 1952 का

अधिनियम 33 अधिनियमित किया गया था, 1956 के अधिनियम 13 के लागू होने से पहले मुकदमा दायर करने वाला एक व्यक्ति, एक लंबित मुकदमे में स्थापित कर सकता है। बचाव कि वह किरायेदार या संरक्षित किरायेदार के अधिकारों का हकदार है।

पटेल मगनभाई लेटभाट के मामले में बॉम्बे हाई कोर्ट ने माना कि धारा 43 सी का प्रावधान किरायेदार को सुरक्षा प्रदान करता है यदि किरायेदार को मूल रूप से अधिनियमित 1948 के अधिनियम की सुरक्षा प्राप्त थी, भले ही सुरक्षा हटा ली गई हो। बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि (संशोधन) अधिनियम, 1952। बॉम्बे उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि धारा 43 सी के प्रावधानों की सुरक्षा किरायेदार को दी जानी चाहिए, यहां तक कि उन मामलों में भी जहां संशोधन से पहले दायर मुकदमे में इसका दावा किया गया था। अधिनियमित, यदि मुकदमे का अंतिम रूप से निपटान नहीं किया जाता है। हम पटेल मगनभाई जेठाभाई के मामले में तय किए गए दोनों प्रश्नों पर बॉम्बे उच्च न्यायालय से सहमत हैं।

लेकिन जिला न्यायाधीश द्वारा मुकदमा खारिज करने का पारित आदेश बरकरार नहीं रखा जा सकता। विद्वान जिला न्यायाधीश ने मुकदमे को खारिज करने का आदेश पारित किया, संभवतः इसलिए क्योंकि इसी तरह का आदेश पटेल मगनभाई जेठाभाई के मामले में पारित किया गया था। पटेल मगनभाई जेठाभाई <sup>(1)</sup> के मामले में यह माना गया था कि

मामलातदार जिसके न्यायालय में मुकदमा दायर किया गया था किरायेदार द्वारा दावा किए गए अधिकारों से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर निर्णय लेने में सक्षम था। पटेल भाई मगन भाई लेटभाट के मामले में फैसले से यह स्पष्ट नहीं हो रहा था कि क्या उसमें वादपत्र मामलातदार द्वारा उसकी स्वयं की मामलातदार की कोर्ट अधिनियम 1906 के 2 की धारा 5 के तहत दायर था या नहीं, 1948 के अधिनियम 67 की धारा 85 के तहत गठित मामलातदार की कोर्ट 1906 के अधिनियम 2 के तहत एक सिविल कोर्ट है जबकि धारा 29 (2) के तहत मामलातदार एक राजस्व कोर्ट है। हस्तगत मामले में वाद-पत्र सिविल कोर्ट द्वारा उचित रूप से सुना गया था परन्तु चूंकि 1956 के अधिनियम 13 के कारण सिविल कोर्ट ऐसे मामले को नहीं सुन सकता था क्योंकि 1948 के अधिनियम 67 की धारा 70 के कारण वो पूर्ण रूप से राजस्व न्यायालय द्वारा सुना जाना था हालांकि 1948 के अधिनियम 67 में ऐसा कुछ नहीं है जो पूर्व में दायर मुकदमों को रोकता हो, ऐसे दावों में राजस्व न्यायालय को ही धारा 70 एवं 85 के तहत विचारण का पूर्ण क्षेत्राधिकार होगा जो कि मामलातदार द्वारा राजस्व कोर्ट के रूप में सुना जायेगा और कास्तकार के विरुद्ध बेदखली की डिक्री भी पारित की जा सकेंगी। परन्तु 1956 के अधिनियम 13 के तहत सिविल न्यायालय ऐसा नहीं कर सकेगा। ऐसे मामले में उचित प्रक्रिया यह है कि सिविल न्यायालय को ऐसे सभी मुद्दों को राजस्व न्यायालय को संदर्भित करना चाहिए जो धारा 70 व 85 के संयुक्त संचालन के आधार पर विशेष

रूप से उस न्यायालय द्वारा विचारणीय हैं। सिविल न्यायालय तब ऐसी डिक्री या आदेश पारित कर सकता है जो राजस्व न्यायालय के निर्णय के अनुरूप हो। यदि राजस्व न्यायालय का मानना है कि मकान मालिक और किरायेदार का संबंध कायम है और किरायेदारी का निर्धारण धारा 14 या 34 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से विधिवत किया गया है। यदि किरायेदार एक संरक्षित किरायेदार है, तो उचित कार्यवाही में राजस्व न्यायालय से धारा 29(2) के तहत एक आदेश प्राप्त करना आवश्यक हो सकता है।

इस संबंध में धारा 85-ए का उल्लेख करना प्रासंगिक हो सकता है जिसे 1956 के अधिनियम 13 द्वारा जोड़ा गया था। धारा, जहां तक यह महत्वपूर्ण है, प्रदान करती है।

"(1) यदि किसी भी सिविल न्यायालय में दायर किए गए किसी मुकदमे में कोई भी मुद्दा शामिल है जिसे इस अधिनियम के तहत ऐसे मुद्दों को निपटाने, निर्णय लेने या निपटने के लिए सक्षम किसी प्राधिकारी द्वारा निपटाया जाना, निर्णय लेना या निपटाया जाना आवश्यक है (इसके बाद इसे "सक्षम" कहा जाएगा) प्राधिकारी") सिविल न्यायालय मुकदमे पर रोक लगाएगा और ऐसे मुद्दों को निर्धारण के लिए ऐसे सक्षम प्राधिकारी को संदर्भित करेगा।



(2) सिविल न्यायालय से ऐसा संदर्भ प्राप्त होने पर, सक्षम प्राधिकारी इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार ऐसे मुद्दों से निपटेगा और निर्णय लेगा और अपने निर्णय के बारे में सिविल न्यायालय को सूचित करेगा और ऐसा न्यायालय उसके बाद मुकदमे का निपटान करेगा। उस पर लागू प्रक्रिया के अनुसार.

स्पष्टीकरण.- इस धारा के प्रयोजन के लिए एक सिविल न्यायालय में मामलातदार न्यायालय अधिनियम, 1906 के तहत गठित कोई भी मामलातदार न्यायालय शामिल होगा।"

1956 के अधिनियम 13 से पहले स्थिति चाहे जो भी रही हो, विधानमंडल ने स्पष्ट रूप से अपना इरादा व्यक्त किया है कि सिविल न्यायालय में उचित रूप से शुरू किए गए मुकदमे में भी, यदि कोई मुद्दा उठता है जिसे राजस्व न्यायालय द्वारा तय किया जाना आवश्यक है, तो मुद्दा उस न्यायालय में विचारण के लिए भेजा जाएगा और उस निर्णय के आलोक में मुकदमे का निपटारा किया जाएगा। इसलिए विधायिका ने स्पष्ट रूप से खुद को व्यक्त किया है कि अधिनियम के तहत आवश्यक मुद्दे 1948 के 67 का निर्णय राजस्व न्यायालय द्वारा तय किया जाना चाहिए, भले ही यह सिविल मुकदमे में उत्पन्न हो, इसका निर्णय राजस्व न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए न कि सिविल न्यायालय द्वारा। पांडुरंग

हरि बनाम शंकर मारुति, 62 बॉम एलआर 873 <sup>(2)</sup> में बॉम्बे हाई कोर्ट द्वारा और कालीचरण भजनलाल बनाम बाई महालक्ष्मी, 1963-4 गुज एलआर 145 <sup>(3)</sup> में गुजरात हाई कोर्ट द्वारा व्यक्त विचार, कि सिविल में एक मुकदमा उचित रूप से स्थापित किया गया था। 1956 के अधिनियम 13 से पहले की अदालत को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता क्योंकि 1948 के अधिनियम 67 के तहत किरायेदारों द्वारा अर्जित अधिकारों को पूर्वव्यापी रूप से बहाल किया गया है, यह सही है, लेकिन हम बॉम्बे और गुजरात उच्च न्यायालयों से सहमत होने में असमर्थ हैं कि 1948 के अधिनियम 67 के तहत उन मुद्दों पर निर्णय देने हेतु सिविल न्यायालय सक्षम है, जिनका निर्णय राजस्व न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है।

जिला न्यायाधीश द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष कि सिविल कोर्ट के पास मुकदमे की सुनवाई का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और वादी के मुकदमे को खारिज करने के लिए उनके द्वारा पारित अंतिम आदेश इसलिए पूरी तरह से सटीक नहीं है। यदि अपीलकर्ता चाहता है कि मुकदमे में उठे किरायेदारी और उसके निर्धारण से संबंधित प्रश्नों की सुनवाई मामलातदार द्वारा राजस्व न्यायालय के रूप में की जाए, जिसका निर्णय करने के लिए केवल वह प्राधिकारी ही सक्षम है, तो जिला न्यायाधीश को उन प्रश्नों को राजस्व न्यायालय को संदर्भित करना चाहिए था निर्धारण के लिए और मुकदमे के निपटान के लिए आगे नहीं बढ़ना चाहिए था। हम तदनुसार उच्च न्यायालय और जिला न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को रद्द कर देते हैं

और निर्देश देते हैं कि जिला न्यायालय अपील को उसकी मूल संख्या में बहाल करे और कानून के अनुसार आगे बढ़े।

ऐसा प्रतीत होता है कि जिला न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता ने मान लिया था कि पटेल मगनभाई जेठाभाई के मामले (1) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले के मद्देनजर मुकदमा खारिज किया जा सकता है, और उसने जिला न्यायालय से अनुरोध किया कि वह इसके खिलाफ लागत का आदेश पारित न करे। उसे मामले की परिस्थितियों में, हम अपीलकर्ता के कानूनी प्रतिनिधियों को प्रतिवादी को इस अपील की लागत का भुगतान करने का निर्देश देते हैं। जिला न्यायालय में होने वाला खर्च घटना का वहन करेगा।

मुधोलकर, जे.

हमारे सामने तर्क में उठाए गए तथ्य और दो बिंदु मेरे भाई शाह द्वारा तैयार किए गए फैसले में दिखाई देते हैं और उन्हें दोहराने की आवश्यकता नहीं है। मैं उनसे सहमत हूँ कि जिला न्यायालय ने अपील की अनुमति देने और वर्तमान अपीलकर्ता के भूमि पर कब्जे के मुकदमे को खारिज करने में गलती की थी। उस मुकदमे में अपीलकर्ता का मामला यह था कि उसने प्रतिवादी को पद छोड़ने के लिए उचित नोटिस देकर उसकी किरायेदारी समाप्त कर दी थी। प्रतिवादी की पर्याप्त दलील यह थी कि उसकी किरायेदारी बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम, 1948 द्वारा

शासित थी क्योंकि यह मुकदमे की तारीख पर थी और एसएस का संयुक्त प्रभाव था। उस अधिनियम की धारा 70 और 85 सिविल अदालत को मुकदमे पर विचार करने के उसके अधिकार क्षेत्र से वंचित करने के लिए थी।

हमारे सामने मौजूद तर्कों में उनकी ओर से विशेष रूप से धारा 43 सी जिसे 1956 के संशोधन अधिनियम 13 द्वारा जोड़ा गया था के परंतुक पर भरोसा रखा गया था। दूसरे पक्ष के विद्वान वकील ने एस के प्रावधानों के लाभ का दावा किया था। अधिनियम का 89(2)(एच) जो कुछ अधिकारों, उपाधियों आदि को संरक्षित करने का प्रयास करता है, और उन्हें अधिनियम के संचालन से छूट देता है। धारा 43 सी के परंतुक का लाभ केवल उस व्यक्ति को उपलब्ध होगी जो अधिनियम के तहत किरायेदार या संरक्षित किरायेदार है या होने का दावा करता है। यह बदले में 1948 में इसके लागू होने के बाद मुकदमे की तारीख तक अधिनियम में किए गए विभिन्न संशोधनों के प्रभाव पर निर्भर करेगा, जिसमें धारा अधिनियम की धारा 89(2)(एच) का प्रभाव भी शामिल है। हालाँकि, अधिनियम की धारा 70 में प्रावधान है कि मामलातदार (जो राजस्व न्यायालय के रूप में कार्य करता है) द्वारा निभाए जाने वाले कर्तव्यों में से एक यह तय करना है कि कोई व्यक्ति किरायेदार है या संरक्षित किरायेदार है। जाहिर तौर पर इसका मतलब अधिनियम के तहत किरायेदार या संरक्षित किरायेदार होने का दावा होना चाहिए। धारा 85 (1) निम्न प्रावधान करता है:-

"किसी भी सिविल न्यायालय के पास किसी भी प्रश्न को निपटाने, निर्णय लेने या निपटने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा, जिसे इस अधिनियम के तहत या इसके तहत निपटाने, निर्णय लेने या निपटाने की आवश्यकता है"

मामलातदार या ट्रिब्यूनल, एक प्रबंधक, कलेक्टर या महाराष्ट्र राजस्व ट्रिब्यूनल द्वारा अपील या पुनरीक्षण में या राज्य सरकार द्वारा नियंत्रण की अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए।

उपरोक्त दो प्रावधानों से यह देखा जा सकता है कि जैसे ही सिविल कोर्ट के समक्ष ऐसा कोई दावा किया जाता है, उसे अपने कार्य रोकना चाहिए और उस प्रश्न को मामलातदार के पास भेजना चाहिए, जो अपने फैसले के लिए राजस्व अदालत के रूप में कार्य करता है। देखें पाइका दसरू भोंगली बनाम राजेश्वर बालाजी अवारी <sup>(4)</sup>। इसका उत्तर देने के लिए मामलातदार को संबंधित पक्षों के बीच मुद्दे के तथ्यों पर फैसला करना होगा और साथ ही मुद्दे पर असर डालने वाले कानून के विभिन्न प्रावधानों के प्रभाव को भी निर्धारित करना होगा। इस तथ्य के मद्देनजर कि कोई व्यक्ति किरायेदार या संरक्षित किरायेदार होने का दावा करता है, उसे उपरोक्त दो प्रावधानों के संयुक्त संचालन से ऐसा करने का विशेष अधिकार क्षेत्र मिलता है। यदि मामलातदार को पता चलता है कि वह एक किरायेदार या संरक्षित किरायेदार है, तो उसे अपना निष्कर्ष सिविल कोर्ट को भेजना

होगा, जिसे उस निष्कर्ष के आलोक में मुकदमे का फैसला करना होगा। दूसरी ओर, यदि उसका निष्कर्ष इसके विपरीत है, तो सिविल कोर्ट को इस आधार पर मुकदमे का फैसला करना होगा कि व्यक्ति के पास उसके द्वारा दावा की गई स्थिति नहीं है। इसलिए, प्रारंभ में, मामले का निर्णय मामलातदार को करना होगा और अधिनियम के तहत किसी भी अपील या संशोधन के परिणाम के अधीन उसका निर्णय अंतिम होगा। हालाँकि, मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि जब मैं यह कहता हूँ तो मैं इस बात पर विचार नहीं कर रहा हूँ कि मामलातदार के निर्णय को अंतिम रूप से अधिकार क्षेत्र संबंधी तथ्य के रूप में माना जाता है या नहीं। अधिनियम के अनुसार मामलातदार द्वारा तय किया जाने वाला प्रश्न केवल तथ्य का हो सकता है या जैसा कि हमारे समक्ष अपील में मामला है, तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न हो सकता है। जिस सिविल कोर्ट के समक्ष मुकदमा लाया गया था, उसने निम्नलिखित मुद्दे उठाए थे (2) क्या बॉम्बे टेनेसी और कृषि भूमि अधिनियम के प्रावधान सूट सर्वे नंबरों पर लागू होंगे? यह स्पष्ट कर दें कि जब मैं यह कह रहा हूँ तो मैं इस बात पर विचार नहीं कर रहा हूँ कि मामलातदार के निर्णय को अंतिम रूप से अधिकार क्षेत्र संबंधी तथ्य के रूप में माना जाता है या नहीं। अधिनियम के अनुसार मामलातदार द्वारा तय किया जाने वाला प्रश्न केवल तथ्य का हो सकता है या जैसा कि हमारे समक्ष अपील में मामला है, तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न हो सकता है। जिस सिविल कोर्ट के समक्ष मुकदमा लाया गया था, उसने

निम्नलिखित मुद्दे उठाए थे (2) क्या बॉम्बे टेनेंसी और कृषि भूमि अधिनियम के प्रावधान सूट सर्वे नंबरों पर लागू होंगे? यह स्पष्ट कर दें कि जब मैं यह कह रहा हूँ तो मैं इस बात पर विचार नहीं कर रहा हूँ कि मामलातदार के निर्णय को अंतिम रूप से अधिकार क्षेत्र संबंधी तथ्य के रूप में माना जाता है या नहीं। अधिनियम के अनुसार मामलातदार द्वारा तय किया जाने वाला प्रश्न केवल तथ्य का हो सकता है या जैसा कि हमारे समक्ष अपील में मामला है, तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न हो सकता है। जिस सिविल कोर्ट के समक्ष मुकदमा लाया गया था, उसने निम्नलिखित मुद्दे उठाए थे।

(2) क्या बॉम्बे टेनेंसी और कृषि भूमि अधिनियम के प्रावधान सूट सर्वे नंबरों पर लागू होंगे?

(3) क्या इस न्यायालय को बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम की धारा 85 के मद्देनजर मुकदमे पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है?

(5) क्या प्रतिवादी साबित करता है कि वह मुकदमे की भूमि का स्थायी किरायेदार है इनमें से पहले और तीसरे का निर्णय मामलातदार द्वारा और दूसरे का निर्णय सिविल न्यायालय द्वारा अन्य दो मुद्दों पर मामलातदार के निष्कर्षों के आलोक में किया जाना था। सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर लगाई गई सीमाएं आवश्यक रूप से इस न्यायालय सहित अदालतों के

संपूर्ण पदानुक्रम तक विस्तारित होंगी, जिसके समक्ष अपील में सिविल न्यायालय के निर्णय को चुनौती दी जा सकती है। इस कानूनी स्थिति के आलोक में मेरा मानना है कि जिला न्यायालय अपीलकर्ता के मुकदमे को खारिज नहीं कर सकता।

हालाँकि, यह न्यायालय केवल जिला न्यायालय के फैसले को रद्द कर सकता है और मुकदमे को सिविल न्यायालय में इस निर्देश के साथ भेज सकता है कि तनकी संख्या 2 और 5 को उसके निष्कर्षों के लिए मामलातदार को भेज दिया जाए। यह न्यायालय स्वयं विभिन्न अधिनियमों की जांच करने के लिए स्वतंत्र नहीं है, प्रावधानों की व्याख्या करें और हमारे सामने मौजूद मामले में उनकी प्रयोज्यता के बारे में अपने निष्कर्ष बताएं। मेरे विचार से धारा अधिनियम की धारा 70(बी) और 85(1) हमारे समक्ष किसी अपील में इनमें से कोई भी कार्य करने का अधिकार क्षेत्र, मेरे विचार से, के संयुक्त संचालन द्वारा वर्जित है।

इसलिए, मैं अपील की अनुमति देता हूँ, नीचे दी गई सभी अदालतों के फैसले को रद्द कर देता हूँ और मुकदमे को प्रथम दृष्टया अदालत में इस निर्देश के साथ भेज देता हूँ कि वह मामले 2 और 5 को निर्णय के लिए मामलातदार को भेज दे और उसके निष्कर्ष प्राप्त होने पर, उसके निष्कर्षों के आधार पर मुकदमे का निर्णय करें। मैं आगे निर्देश दूंगा कि अब तक



की गई लागत मुकदमे में लागत होगी और विवाद के अंतिम निर्णय का पालन करेगी।

आदेश बहुमत की राय के अनुसार उच्च न्यायालय और जिला न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को रद्द कर दिया जाता है और अपील को जिला न्यायालय को इस निर्देश के साथ भेज दिया जाता है कि वह अपील को उसके मूल क्रमांक पर बहाल करे और कानून के अनुसार आगे बढ़े। अपीलकर्ता के कानूनी प्रतिनिधि प्रतिवादी को इस अपील की लागत का भुगतान करेंगे।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी जीतेंद्र सांवरिया (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

1. (1958) 60 बाम्बे एल.आर.-1383 पटेल मगनभाई जेठाभाई बनाम सोनजाभाई सुरसांग
2. (1) 62 बाम्बे एल.आर.-873 पांडुरंग हरि बनाम शंकर मारुती
3. (2) गुजरात एल.आर.-145 कालीचरण भजनलाल बनाम बाई महालक्ष्मी,
4. (1) (1958) 60 बाम्बे एल.आर.-8 (एफ.बी) पाइका दसरू भोंगली बनाम राजेश्वर बालाजी अवारी